International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 6.924 Volume 10, Issue 12, Dec 2023
Website- www.aarf.asia, **Email** : editoraarf@gmail.com

1857 की क्रांति और उत्तराखंड के स्वतंत्रता सेनानी कालू महरा की भूमिका

श्री राजकमल किशोर
असि० प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय मुवानी (पिथौरागढ़)

कालू महरा उत्तराखण्ड का वह नाम हैं जिन्हें याद करते ही भारतीय स्वतंत्रता के लिये की गयी उस प्रथम क्रांति की यादें उभर के सामने आती हैं, जिसमें पहली बार ब्रिटिश शासन को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिये भारतीयों ने एकजुट होकर संघर्ष किया था। जिस प्रकार प्रत्येक महान शख्सियत को पैदा करने में तत्कालीन परिस्थितियाँ जिम्मेदार होती हैं उसी प्रकार वीर कालू महरा को निर्मित करने में भी तत्कालीन परिस्थितियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। यह वह दौर था जब भारत में अंग्रेजी हुकूमत स्थापित हो गई थी और अपनी जड़े मजबूत करती जा रही थी।

सन् 1600 में ब्रिटेन में अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना की गयी थी, जो लंदन के व्यापारियों द्वारा स्थापित कंपनी थी। ये लोग ईस्ट इण्डीज में व्यापार करते थे। इस कंपनी का भारत में आगमन सन् 1612 में हुआ जब उस दौर में मुगल बादशाह जहाँगीर ने ब्रिटेन की महारानी एलिज़ाबेथ प्रथम के राजदूत, सर टॉमसरो को व्यापार से सम्बन्धित एक केन्द्र सूरत में

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

स्थापित करने की अनुमति दी थी। ईस्ट इंडिया कंपनी व्यापारिक शक्ति से धीरे-धीरे राजनीतिक शक्ति में परिवर्तित होने लगी। 'भारत में ब्रितानी शासन का प्रारंभ सन 1757 से माना जा सकता है जब ब्रितानी ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना ने बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला को पलासी के युद्ध में पराजित कर दिया था।'[1]

ईस्ट इंडिया कंपनी ने व्यापारिक लाभ को बढ़ाने के साथ-साथ राजनीतिक शक्ति को बढ़ाने का कार्य जारी रखा और सम्राज्यवादी नीति के तहत क्षेत्र विस्तार करती चली गयी।

ब्रिटिश शासन में भारतीयों द्वारा अंग्रेजी शासन का विरोध समय-समय पर किया जाता रहा। 1857 की क्रांति से पूर्व भी भारतीयों द्वारा संपूर्ण देश में किसी न किसी जगह से विरोध की ज्वाला भड़कती रही।

उत्तराखण्ड में 1815 में ईस्ट इंडिया कंपनी का आगमन हुआ इससे पूर्व गढ़वाल और कुमाऊं में गोरखाओं का शासन हुआ करता था। 'सन् 1815 ई0 में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कंपनी ने गोरख सेना के अधिकार से कुमाऊं और गढ़वाल को मुक्त कर अपने अधिकार में कर लिया।'[2] गोरखाओं का शासन उत्तराखंड के लोगों के लिए अत्याचारी व निरंकुशता से भरा हुआ था। उनकी निरंकुश नीतियों से उत्तराखंड की जनता अत्यधिक पीड़ित थी। गोर्खाओं के अत्याचार के कारण अंग्रेजो का ध्यान कुमाऊं व गढ़वाल की ओर गया। अंग्रेजों का इस क्षेत्र पर पूर्ण रूप से अधिकार 4 अप्रैल 1816 को सिंगोली की सन्धि के बाद हुआ। पश्चिम गढ़वाल राजा सुदर्शन शाह को सौंप कर उत्तराखण्ड के पूरे क्षेत्र पर अंग्रेजों द्वारा शासन स्थापित कर लिया गया और काली नदी को गोरखाओं की सीमा निर्धारित कर दिया गया । उत्तराखण्ड के लोगों में

अंग्रेजो के विरुद्ध कोई बड़ा प्रतिरोध देखने को नहीं मिलता क्योंकि यहां के लोगो को अंग्रेजी शासन गोरखा शासन कि अपेक्षा उदारवादी व बेहतर लगा किन्तु बावजूद इसके उत्तराखण्ड 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम से दूर ना रह सका और लोगों ने स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयास किये।

अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलनों के इतिहास में 1857 का गदर महत्वपूर्ण घटना थी। इस समय कुमाऊं के कमिश्नर के रूप में सर हैनरी रैमजे द्वारा पूरी कोशिश की गयी थीं की विद्रोह का असर यहां तक न पहुंचे और उन्होंने इस क्षेत्र में सैनिक कानून लागू कर दिया था। 'स्थानीय राजवंश के राजकुमारों, थोकदारों, जमीदारों द्वारा ब्रिटिश शासन से सहयोग करने के आश्वासन से स्थानीय जनता द्वारा विद्रोह में किसी भी रूप में भाग लेने की संभावनाएं क्षीण हो गई थीं।'[3]

बावजूद इसके उत्तराखण्ड में 'कालू महरा' के रूप में विद्रोह की पहली ज्वाला भड़की जिन्हे उत्तराखंड का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम सेनानी कहा जाता है।

कालू महरा का परिचय - 'ब्रिटिश शासन के विरुद्ध 1857 में हुए प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का प्रभाव पहाड़ी क्षेत्र में भी हुआ जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण क्रांतिकारी नायक कालू महरा थे।'[4] 'प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के क्रांतिकारी नायक कालू महरा का जन्म सन 1831 को जनपद चंपावत के विसुंग गांव में हुआ।'[5] कालू महरा के परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत थी। उनके पिता का नाम ठाकुर रतीभान सिंह था, जों व्यापारी व आर्थिक रूप से सम्पन्न व्यक्ति थे। उस समय उनके तिब्बत से व्यापारिक संबंध थे और अच्छी खासी आमदनी थी। आर्थिक मजबूती के साथ-साथ उनका सामाजिक प्रभाव भी अच्छा था।

कालू महरा उस सम्पन्न परिवार से थे, जहाँ व्यापार के लिये घोड़े और पर्याप्त धन मौजूद था। वे अच्छी घुड़सवारी करते थे और घोड़े में ही यात्रा किया करते थे। कहां जाता है कि ये एक ही दिन में अल्मोड़ा तक का सफर पूरा करके अपने गांव वापस भी आ जाते थे। यह अपनी कमर में खुकुरी लटका कर रखते थे और चारों ओर से लंबा चोखा लपेट कर पहना करते थे। उनमें मानवता के गुण भी थे और ये अपनी यात्राओ के दौरान जरूरतमंदों को जरुरी सामान बाटते हुए आते थे।

उनके संबंध में एक घटना कही जाती है कि कालू महरा प्रति वर्ष रक्षाबंधन के अवसर पर सेलाखोला के ब्राह्मण से रक्षा धागा बांधने के लिए रक्षाबंधन के दिन जाया करते थे और उन्हें दक्षिणा देते थे। वहां के कुछ दीवान वर्ग उनके रौबदार व्यक्तित्व से चिढ़ते थे और उन्हें बेइज्जत करने के लिये उन्होंने सोचा की इस बार कालू महरा ब्राह्मण को जितनी दक्षिणा देंगे उससे दोगुनी दक्षिणा हम दिंगे और उन्हें अपमानित करेंगे। जब कालू महरा असाड़ी के दिन अल्मोड़ा राखी बधवाने गये तो वहाँ के दीवानों ने कालू महरा से पहले राखी बधवाने को कहा। जैसे ही ब्राह्मण ने कालू मेहरा के हाथ में रक्षा का धागा बांधा उन्होंने भेंट स्वरूप स्वर्ण मुद्राएं निकालकर दक्षिणा दे दी । सभी दीवान अचंभित रह गए, क्योंकि उनके पास केवल चांदी के सिक्के थे। कालू महरा अपनी बसनी ढीली करते हुये घोड़े पर चढ़ गए। ढीली बसनी से चांदी के सिक्के नीचे जमीनी पर गिरने लगे। कालू महरा ने उन दीवानों को गिरते हुये सिक्को को उठाने को कहा। दीवान जब गिरे हुये सिक्को को उठाने लगे तब कालू महरा ने ऊँची आवाज में कहा की- तुम सब घोड़े के पैरों के नीचे से गिरे हुए सिक्को को उठाने योग्य ही हो।

कालू महरा सम्पन्न परिवार और रोबदार, जोशीले व अभिमानी व्यक्तित्व के कारण समाज में प्रभावशाली व्यक्ति थे।"कालू मेहरा अपनी इस विशेषता के कारण खानबहादुर खान, रुहेला नवाब तथा टिहरी नरेश से अच्छे संबंध थे।"[6] उनका 1857 के क्रांतिकारियों से सीधा संबंध था।

तत्कालीन कुमाऊं कमिश्नर रामजे साहब-

'बैटन के बाद सर हैनरी रैमजे कुमाऊँ के कदाचित सर्वाधिक लोकप्रिय कमिश्नर नियुक्त हुए।'[7] कप्तान रामजे को सन् 1856 में कुमाऊँ का कमिश्नर नियुक्त किया गया। यह स्काटलैंड के निवासी व कुलीन वंश (लार्ड खानदान) से सम्बंधित थे। बाद में ये मेजर जनरल सर हेनरी रामजे कहलाये । सन् 1856 से 1884 तक यह कुमाऊँ के कमिश्नर रहे जो उदार प्रवृत्ति के और कुशल शासक थे। रैमजे कुमाऊं की आम जनता से घुल-मिल जाया करते थे । 1857 की क्रांति के दौरान रैमजे के नियंत्रण में यह क्षेत्र अपेक्षाकृत शांत रहा। इनको कुमाऊँ में 'रामजी साहब' नाम से पुकारा जाता था। रामजे साहब को कुमाऊँ में उम्र में छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा व्यक्ति जानता था क्योंकि ये हर किसी से परिचित रहते थे और पहाड़ी भाषा भी बोला करते थे।

रामजे साहब की उदारतापूर्ण नीति तथा अंग्रेजी शासन द्वारा पहाड़ के क्षेत्र को मैदान के क्षेत्र में फैल रही क्रांति से दूर रखने के प्रयत्न के बाद भी उत्तराखंड 1857 की क्रांति से अछूता न रह सका और इस क्रांति में जो प्रथम नायक बनकर उभरे उनका नाम था कालू महरा। 'इन्हें उत्तराखंड का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम सेनानी होने का गौरव प्राप्त है।'[8]

1857 की क्रांति व कालू महरा - भारतीयों द्वारा अंग्रेजी हुकूमत से स्वतंत्रता प्राप्ति का पहला प्रयास 1857 में हुआ। इस क्रांति से उत्तराखण्ड भी अछूता नहीं रहा। बरेली के नवाब खान बहादुर खां ने अधिकार करने के लिए अनेक बार हल्द्वानी पर आक्रमण किया, किन्तु अंग्रेजों की शक्तिशाली सेना ने उन्हें पराजित कर दिया। अंग्रेजों द्वारा यहाँ के लोगों को गोर्खाओं के अत्याचारी शासन से मुक्ति दिलाने, रामजे का उदार व्यक्तित्व, टिहरी रियासत द्वारा ब्रिटिश हुकूमत का समर्थन करने आदि कारणों से यहाँ 1857 कि क्रांति का प्रभाव कम देखने को मिला।

कहा जाता है कि कालू मेहरा के नाम पर पत्र लिखकर लखनऊ व अवध के नवाब वाजिदअलीशाह ने उनसे समझौता किया और निर्धारित किया कि वे अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष में सहयोग करें और आजादी के पश्चात पर्वती क्षेत्र उन्हें दे दिया जाएगा तथा मैदानी क्षेत्र में नवाब का शासन रहेगा। स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु निर्भीक कालू मेहरा ने समझौता स्वीकार किया और लोगों को गदर मैं शामिल होने के लिए एकजुट करना प्रारंभ किया। कालू महरा ने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर निर्धारित किया कि कुछ लोग अंग्रेजों की ओर हो जाएंगे तथा कुछ लोग नवाब की तरफ तथा जहां से जो कुछ प्राप्त होगा उसे सभी लोग आपस में वितरित कर लेंगे। 'अतः श्री कालू महरा, श्री आनंदसिंह फरत्याल तथा श्री बिसनसिंह करायत तो लखनऊ के नवाब के यहाँ को गये। ठा० माधोसिंह फरत्याल, ठा० नरसिंह लठवाल तथा ठा० खुशालसिंह जलाल आदि अँगरेजों की तरफ रहे।'[9]

"इस संधि के पश्चात काली कुमाऊँ क्षेत्र में अंग्रेजो के विरूद्ध संघर्ष की तैयारी शुरू हो गई। अनेक लोग कालू महरा के नेतृत्व में संगठित हो गये। चौड़ापित्ता के बोरा, रैघों के बेड़वाल, रौलमेल के लड़वाल, चकोट के क्वाल, धौनी, मौनी और करायत, देव, बोरा व फड़त्याल ने सर्वसम्मति से कालू महरा को अपना सेनापति नियुक्त किया। सभी ने मिलकर लोहाघाट स्थित अंग्रेजों की बैरकों में धावा बोल दिया और बैरकों में आग लगा दी। जिससे अंग्रेजों को लोहाघाट छोड़कर भाग जाना पड़ा।"[10]

रामजे साहब ने यहां मार्शल लॉ लगा रखा था जिसके तहत कोई भी अंग्रेजी हुकूमत का विरोध करता या विरोधियो की सहायता करता तो उसे गोली मार दी जाती या जेल में डाल दिया जाता था । उस समय नैनीताल के फांसी गधेरे में अंग्रेजी हुकूमत के विरुद्ध जाने वालों को फांसी दी जाती थी।

काली कुमाऊं के विद्रोह का समाचार ब्रिटिश कमीशनर रेमजे को मिला तो उन्होंने दो सेनायें काली कुमाऊं को भेजी एक सेना मैदानी क्षेत्र में चल रहे विद्रोह को पहाड़ी क्षेत्र तक न पहुंचने देने के लिये तथा दूसरी सेना लोहाघाट भेजी गयी जिसने कालू सिंह मेहरा के विश्वासपात्र को हरा कर मार डाला व अन्य लोगों को भी मौत के घाट उतार दिया । आंदोलनकारियों ने किरमौली गांव के निर्धारित स्थान पर हथियार एवं धन रखा हुआ था। उसे भी अंग्रेजों ने अपने कब्जे में ले लिया। कहा जाता है कि उस समय कालू महरा के अनेक सहयोगी अंग्रेजों की शरण में चले गए थे और उन्हें पुरस्कार में संपत्ति प्राप्त हुयी।

इसके बावजूद भी कालू महरा ने हार ना मानी और अपना संघर्ष जारी रखा। वे अपने कुछ साथियों को लेकर स्वतंत्रता पाने के लिये अल्मोड़ा की और चल दिये। उस समय अल्मोड़ा में अंग्रेज अफसर और सेनाएं रहा करती थी।

कालू मेहरा दबंग प्रवृत्ति के निर्भीक व साहसी व्यक्ति थे, लेकिन उनके पास सैनिकों की कमी थी। अल्मोड़ा के जोशियों द्वारा कालू मेहरा तथा अंग्रेजो के बीच समझौता कराने की कोशिश की गयी । अल्मोड़ा में अंग्रेजी सेना की छावनी थी जहाँ कालू महरा को मशाल जलाकर अपनी सेना के साथ बुलाया गया और ये सेना रात को ढौर गाँव में ठहरी। जोशियों द्वारा उनसे रात में अधिक मशालों को जलाकर अधिक से अधिक बन्दुकों की आवाजे करने को कहा गया तथा अंग्रेजो को बड़ी सेना होने का डर दिखाया गया । अंग्रेजों की संख्या में अधिक नहीं थे और वे बड़ी सेना होने के भय से डर गये तथा उन्होंने कालू महरा से समझौता कर लिया। कहा यह भी जाता हैं, कि कालू महरा को अंग्रेजी सेना द्वारा जब गिरफ्तार किया गया था तो उन्हें कैद से छुड़ाने को उनके लोग रात को ढौर गाँव में ठहरे और उन्होंने रात में मशालें जलाकर व जोर-जोर से गोलियों की आवाज कर अंग्रेजों को एक बड़ी सेना व अधिक संख्या होने का डर दिखाया। स्थानीय लोगो द्वारा भी अंग्रेजो को भय दिखाया गया कि कालू महरा कि बड़ी सेना अल्मोड़ा कि ओर बढ़ रही हैं। अंग्रेजों की संख्या कम थीं और वे भयभीत हो गये तथा उन्होंने कालू महरा से समझौता कर लिया। कहा जाता हैं कि कालू मेहरा से जब अंग्रेजो ने समझौते में जागीरें मागने को कहा तो उन्होंने मना कर दिया जों उनके स्वाभिमानी होने का परिचय देता हैं और यह भी कहा जाता हैं कि कालू मेहरा ने नवाब से समझौते में कहा था कि

"जहाँ तक रथ का पहिया चलेगा वहाँ तक का छेत्र नवाब का बाकि मेरा" मूलतः समझौता क्या था किसी को पता नहीं लेकिन इन कहावतें से यह जरूर सिद्ध होता है कि कालू मेहरा एक निर्भीक व स्वाभिमानी देशभक्त थे।'लोग कहते हैं कि विद्रोह शान्त होने के पश्चात् कालमारज्यू अपने घर पर ही रहे, पूर्ण आयु भोगी। चोरों ने उनके घर में चोरी भी की, किन्तु बिसङ के लोगों ने उनकी आर्थिक सहायता करके उनके कष्ट को कम किया।'[11]

इस विद्रोह के पश्चात कई लोगों को जान से मार दिया गया। आनन्द सिंह फर्त्याल और बिशन सिंह करायत को मार दिया गया । कालू महरा के घर में आग लगा दी गयी। रामकृष्ण वारियाल नेपाल भाग गए। अनेक क्रांतिकारी जंगलों में भाग गए और वहीं भूखों मर गए। अंग्रेज समर्थकों को पुरस्कृत किया गया। अंग्रेज समर्थक माधोसिंह को बरेली तथा नरसिंह को सैय्यदपुर किरौड़ा व दूरदासपुर में जागीर दी गई। काली कुमाऊँ से 1937 तक लोगों को सेना में नहीं लिया गया और यहां के लोगो को बागी कहा गया । कुछ समय बाद कालू महरा अपने गांव विसुंग लौट आये।

गांव में उनके मकान को जला दिया गया था और इन्होंने अपना निवास मायावती आश्रम के समीप जंगल में स्थित खाटखुटुम नामक स्थान पर बनाया। वे वहाँ शांतिपूर्ण तरीके से एकांत में रहने लगे। इसके बावजूद भी अंग्रेजी हुकूमत उन पर नजर रखे रहती और उनके क्रियाकलापों की सूचना अंग्रेजों तक पहुंचती रहती थी।

'इनका देहांत सन् 1906 में खाटखुटुम में हुआ।'[12]

निष्कर्ष- "स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इनका व्यक्तित्व अनोखा ही था। सशस्त्र विद्रोह करने के पश्चात भी उन्हें सजा नहीं हुई। कुछ कमिश्नर रैम्जें की इस क्षेत्र को शांत करने की नीति के कारण भी हो सकते है।"[13] कालू मेहरा का स्वतंत्रता के लिए संघर्ष बुलंदियों तक तो नहीं पहुंच पाया लेकिन आने वाली पीढ़ी को स्वतंत्रता के लिए प्रेरित जरूर कर गया। उनके शौर्य और वीरता के किस्से आज भी स्थानीय स्तर पर सुनाये जाते हैं। भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के इस वीर नायक की प्रतिमा सन् 2009 में उत्तराखंड की राजधानी देहरादून में स्थापित की गई। उत्तराखंड में जब भी भारतीय स्वाधीनता संग्राम के सेनानियों को याद किया जाएगा कालू मेहरा व उनके सहयोगियों के संघर्ष और बलिदान को हमेशा याद किया जाएगा।

संदर्भ

1- विपिन चंद्र, अमलेश त्रिपाठी, अरुण दे- स्वतंत्रता संग्राम- नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (तेईसवीं आवृत्ति:2013)- नेहरू भवन, नई दिल्ली- पृष्ठ संख्या:02

2- पद्मा दत्त पन्त - उत्तराखंड का कुमूँ (वर्ष-2015) - हिमाल प्रेस बैंक रोड सिल्थाम पिथौरागढ़, उत्तराखंड - पृष्ठ संख्या:10

3- डॉ0 योगेश धस्माना- उत्तराखंड में जन जागरण और आंदोलन का इतिहास (वर्ष -2006)- बिनसर पब्लिशिंग कंपनी देहरादून- पृष्ठ संख्या:14

4- कल्पना- काली कुमाऊँ का भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान एक अध्ययन: (जनपद चंपावत के विशेष संदर्भ में) (1815 से 1947)- शोध प्रबंध -2017- पृष्ठ संख्या:151

5- डॉ0 दिनेश चंद्र बलूनी, इंद्र लाल वर्मा - उत्तराखंड का सीमांत जनपद चंपावत (वर्ष-2013)- बिनसर पब्लिशिंग कंपनी देहरादून- पृष्ठ संख्या:180

6- देवेंद्र ओली- आज का पहाड़ (कुमाऊं में स्वाधीनता आंदोलन- कालू मेहरा: उत्तराखंड का प्रथम स्वतंत्रता सेनानी) (वर्ष-1997)- आज का पहाड़ 'परिशिष्ट विभाग' चिल्कोटी भवन, बैंक रोड, पिथौरागढ़ - पृष्ठ संख्या:06

7- डॉ0 अजय सिंह रावत- उत्तराखंड का समग्र राजनीतिक इतिहास (पाषाण युग से 1949 तक) (वर्ष- 2016)- अंकित प्रकाशन हल्द्वानी (नैनीताल)- पृष्ठ संख्या:200

8- केसरी नंदन त्रिपाठी एवं डॉक्टर आलोक कुमार-उत्तराखंड: एक समग्र अध्ययन (त्रयोदश संस्करण वर्ष-2022)- बौद्धिक प्रकाशन देवनगर, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश-पृष्ठ संख्या:101

9- बद्री दत्त पांडे - कुमाऊं का इतिहास (वर्ष-1937) - देशभक्ति प्रेस अल्मोड़ा, उत्तराखंड -पृष्ठ संख्या:456

10- डॉ0 दिनेश चंद्र बलूनी, इंद्र लाल वर्मा - उत्तराखंड का सीमांत जनपद चंपावत (वर्ष 2013)- बिनसर पब्लिशिंग कंपनी देहरादून - पृष्ठ संख्या-182

11- डॉ0 राम सिंह -राग- भाग काली कुमाऊं (वर्ष-2002)- पहाड़ प्रकाशन, परिक्रमा, तल्ला डांडा, नैनीताल -पृष्ठ संख्या-90

12- डॉ0 दिनेश चंद्र बलूनी, इंद्र लाल वर्मा - उत्तराखंड का सीमांत जनपद चंपावत (वर्ष 2013)- बिनसर पब्लिशिंग कंपनी देहरादून - पृष्ठ संख्या-184

13- देवेंद्र ओली- आज का पहाड़ (कुमाऊं में स्वाधीनता आंदोलन- कालू मेहरा: उत्तराखंड का प्रथम स्वतंत्रता सेनानी) (वर्ष-1997)- आज का पहाड़ 'परिशिष्ट विभाग' चिल्कोटी भवन, बैंक रोड, पिथौरागढ़ (पृष्ठ संख्या-07)